RECENT RESEARCHES in
SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES

Issue : 1, Year : 4
Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 64 - 68
ISSN 2348 – 3318

International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

वेदों में पर्यावरणीय संचेतना

धर्मेन्द्र यादव
शोध छात्र*

डी0 पी0 सकलानी
प्रोफेसर*

*इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, हे0न0ब0ग0वि0वि0, श्रीनगर गढ़वाल उत्तराखण्ड

Received : 21/03/2017 *1st BPR* : 22/03/2017 *2nd BPR* : 28/03/2017 *Accepted* : 04/04/2017

ABSTRACT

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा का शुभारम्भ वनों से ही हुआ है। इसी कारण हमारी प्राचीन संस्कृति 'आरण्यक संस्कृति' के नाम से जानी जाती है। पर्यावरण संरक्षण प्राचीन काल से हमारी संस्कृति का एक अटूट अंग रहा है। इसका मूल आधार प्रकृति पर हमारी निर्भरता एंव उसके प्रति हमारा सम्मान है। वेदों में स्थलीय पर्यावरण, जलीय पर्यावरण एवं वायवीय पर्यावरण के संरक्षण और उसके दूषित होने पर सुधार करने की विधी और प्रेरणायें दी गयी है। पृथ्वी में विद्यमान, पृथ्वी से उपजने वाली और पृथ्वी की विकारभूत सभी वस्तुओं का संरक्षण तथा संशोधन आवश्यक है। जल के महत्व का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि जल ही जीवन है। इस जल को बनाये रखने और नष्ट न होने देने तथा उसके शुद्धिकरण का सदा ध्यान रखना चाहिए। इसी प्रकार वायुमण्डल के शुद्धिकरण पर जोर दिया गया है। वेदों में यह उल्लेख किया गया है कि मनुष्य अपने प्रयासों से वायु, जल तथा औषधी–वनस्पति को इतना शुद्ध रखें कि वे माधुर्य की धारा बहाया करें और उनके संसर्ग में रहने वाले मनुष्यादी समस्त जीव–जन्तु सुख और शांति का अनुभव करें। भारतीय संस्कृति में पर्यावरण सुरक्षा एवं संतुलन को धार्मिक आधार प्रदान कर, उसे हमारे जीवन के अनिवार्य अंग के रूप में उल्लेख किया गया है। पर्यावरण से सम्बनधित सभी तत्वों, वन एवं वनस्पतियों को देवत्व का अंश बताकर उनके प्रति न केवल आदरभाव प्रदर्शित किया, पर्यावरण सुरक्षा को सुनिश्चित आधार प्रदान किया गया है अपितु पर्यावरण को धार्मिक आस्था से जोड़कर उसके संरक्षण एवं संवर्धन का मार्ग भी प्रशस्त किया है। भारतीय संस्कृति में पर्यावरण को कभी भी जड़ पदार्थ मात्र नहीं माना गया। उन्हें हमेशा सजीव प्राकृतिक तत्व के रूप में सम्मान दिया गया। पर्यावरण से ही हमारी संस्कृति उपजी, पनपी और विकसित हुई, इसलिए आदिकाल से लेकर आधुनिक युग मे पर्यावरण के महत्व को समझते हुए पर्यावरण के प्रति अनुराग तथा उनकी रक्षा कर और उनके सहयोग से सुखी व संतुलित जीवन बिताने पर बल दिया गया है।

मुख्य शब्द : वेद, पर्यावरण, संचेतना, स्थलीय पर्यावरण, जलीय पर्यावरण, वायवीय पर्यावरण।

प्रस्तावना

वेदों में पर्यावरणीय संचेतना का विवेचना करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि पर्यावरण से अभिप्राय क्या है। पर्यावरण – परि+आ+वृ+ल्युट्+सुं परित आवरणं पर्यावरणम्। अर्थात चारों ओर से जो घेरे हुए है वही पर्यावरण है।[1] दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि मनुष्यादि प्राणियों तथा वृक्ष–वनस्पतियों के चारों और पृथ्वी, वायु, आकाश, अग्नि, जल इन पॉच महाभूतो एवं मनुष्य, पशु, पक्षी आदि विविध जीवों की अवस्थिति को व्यापक अर्थो में पर्यावरण कह सकते है। प्रकृति में सजीव एवं निर्जीव दोनों समाहित है, सजीव घटक में मनुष्य, जीव–जन्तु एवं समस्त प्राणी जगत आता है। समस्त जैविक एवं अजैविक तत्व प्रकृति में सहअस्तित्व एवं पारस्परिक अन्तरसम्बधों के आधार पर ही इस भूमण्डल के पर्यावरण का निर्माण करते है। मानव सहित सभी जीव इसी पर्यावरण की उपज है। मावन इस सृष्टि की सर्वोत्तम रचना है जो पर्यावरण के रहस्यों को सबसे अधिक समझ पाया है। मावन की समस्त अनुक्रियायें तथा आधारभूत आवश्यकतायें, प्रमुख उद्यम, सामाजिक आवश्यकतायें, उच्चस्तरीय आवश्यकतायें एवं सौरमण्डलीय क्रियाकलाप आदि का सीधा सम्बध पर्यावरण से है। मानव एवं पर्यावरण का परस्पर घनिष्ठ सम्बध है। भूमि, वायु, वर्षा, वनस्पति, पेड़–पौधों, वन्य–जीव, सूर्य की रोशनी, पर्वत, नदी, तालाब, समुन्द्र, पशु–पक्षी, मनुष्य, कीटाणु आदि सभी मिलकर पर्यावरण की संरचना करते है। प्रकृति में इन सबकी मात्रा और संरचना इस प्रकार व्यस्थित एवं नियत्रित है कि पृथ्वी पर एक सन्तुलित जीवन चक्र लाखों वर्षो से चल रहा है।[2] प्रकृति और मानव के बीच एक मूलभूत व्यवस्था, एकता, समता और नियमबद्धता के कारण उनमें पारस्परिक निर्भरता देखने को मिलती है। मानव और प्रकृति का यह सास्वत सम्बध है। मानव प्रकृति को और प्रकृति मानव को प्रभावित करती है।

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 64-68 , ISSN 2348 – 3318
धर्मेन्द्र यादव एवं डी0 पी0 सकलानी
International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

अध्ययन के उद्देश्य

1. वेदों में पर्यावरणीय संचेतना का अध्ययन करना।
2. वेदों में स्थलीय पर्यावरण संचेतना का अध्ययन करना।
3. वेदों में जलीय पर्यावरण संचेतना का अध्ययन करना।
4. वेदों में वायवीय पर्यावरण संचेतना का अध्ययन करना।

पर्यावरण के प्रति जागरूकता वर्तमान की अनिवार्य आवश्यकता के रूप में प्रकट हो गई है। वर्तमान समय में पर्यावरण का संकट आधुनिक औद्योगिक युग की देन है। मानव की बढ़ती हुयी स्वार्थपरता एवं भोग लिप्सा के कारण प्राकृतिक संसाधनों कर अन्धाधुन्ध दोहन हो रहा है। वैश्वीकरण, उदारीकरण तथा बाजारीकरण व भौतिक दिखावे के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का सर्वथा विनाश किया जा रहा है। जिसका प्रत्यक्ष परिणाम ग्लोबल वार्मिंग के रूप में दिखाई दे रहा है। वस्तुतः यह मानव की धृष्टता ही है जो स्वार्थपरक होकर जीवनदायिनी प्रकृति का शोषण कर रहा है। आज हमें पुनः अपने ऋषियों, मुनियों एवं पूर्वजों के आचरण का एवं प्राचीन परम्परा का अनुकरण करना है जैसे स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का कथन था "वेदो की ओर लौटों" वो आज हमारी संस्कृति की अक्षुण्य परम्परा को जीवित रखने के लिए अति अनिवार्य आवश्यकता बन गई है।[3] अर्थात् जिस प्रकार वेदों में (अग्नि सूक्त, पृथ्वी सूक्त) इत्यादि के द्वारा पर्यावरण के सभी घटकों तथा पर्यावरण प्रदूषण के निवारण की बात कही गयी है उससे यह स्पष्ट है कि वेद हमारे पथप्रदर्शक ही नहीं वरन् भाग्य विधाता है। वेद के अनुकरण मात्र से ही वैदिक जयघोष सार्थक होगा। वेद में पर्यावरण की शुद्धता के लिये कई श्लोक कहे गये हैं।

पर्यावरणीय समस्या के समाधान में वैदिक वाङ्मय अद्वितीय है। प्रकृति और मानव का मानवीय सम्बन्ध अप्रतिम है। वस्तुतः प्रकृति के प्रति सघन आत्मीयता एवं अगाध श्रृद्धा आनादिकाल से मानव को प्रकृति प्रेमी बनाती है। मनुष्य एवं प्रकृति के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध वैदिक मनीषयों की दृष्टि से अनुकरणीय है।[4] वेदों में अग्नि, वायु, आकाश, जल तथा पृथ्वी इन पंचमहाभूतों को प्रत्यक्ष देवता माना गया है एवं अनेक सूक्तों के माध्यम से इनकी स्तुति की गयी है। वैदिक प्रार्थनाओं में यर्जुवेद में प्रार्थना है कि मेरे लिए धुलोक अन्तरिक्षलोक एवं पृथ्वी सुख शान्ति दायक हो, जल औशधियाँ और वनस्पतियाँ शान्ति देने वाली हो, समस्त देवता ब्रह्म और सब कुछ शान्ति प्रद हो। शान्ति विश्व और सर्वत्र फैली हुई है, वह मुझे प्राप्त हो। मै बराबर शान्ति का अनुभव करूँ।

भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषता रही है कि जो कोई भी हमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपे से देता है, जो हमारे लिये जीवानोपयोगी है तो वह हमारे लिये आदरयोग्य एवं देवतातुल्य है। यह सृष्टि भी बहुत कुछ देती है और बदले में कुछ नही लेती इसलिये यह हमारें लिये आदरणीय एवं देवतातुल्य है।[5,6,7,8] वेदों में पर्यावरण के व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक ढ़ग से उसके व्यष्टिगत एवं समष्टिगत सभी प्रकार से पर्यावरणों की संरक्षा और दूशित होने पर सुधार करने की विधि और प्ररेणायें दी गयी है।[9] ऋग्वेद में पर्यावरण से सम्बधित विभिन्न प्राकृतिक तत्वों का मानवीय संवेदना के धरातल पर विविध रूपों में वर्णन किया गया है। तथा उन्हें हमारी धार्मिक भावनाओं के साथ जोड़ कर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से उनके सरंक्षण एवं संवर्धन को मानवीय कर्तव्य के रूप में उल्लेख किया गया है। ऋग्वेद में लिखा है कि– आकाश को पिता, पृथ्वी को माता, चन्द्रमा को भाई ,तथा अखण्ड पृथ्वी को बहन तुल्य प्रेम एवं सौहार्द्र देना चाहिए। यदि पृथ्वी के विभिन्न घटकों को हम आदरभाव दे और उन्हे अपने जीवन का अभिन्न अंग मानकर उन्हें नष्ट ना होने दे तो वह हमारें लिये वरदान सिद्व होगें।[10] प्रकृति के शाश्वत नियमों को आदर करों, वे बडी मधुरता से जीवन में सहायक होते है।[11]

वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति का विकास प्रकृति की गोद में हुआ है। वेदों में पर्यावरण संरक्षण के लिये वैज्ञानिक उपाय अपनाया है, जिसका प्रत्यक्षतः प्रभाव हमारें जीवन में दृष्टिगत है। वैदिक मनीषियों नें सर्वदा पर्यावरण प्रदूषणमुक्त धरा की कल्पना की है।[12] वेदों में पर्यावरणीय संचेतना की बात है उनमें स्थलीय पर्यावरण, जलीय पर्यावरण, एवं वायु पर्यावरणों के संरक्षण एवं उसके दूषित होने पर सुधार करने के विधि और प्ररेणायें दी गयी है।

स्थलीय पर्यावरण

स्थलीय पर्यावरण के अर्न्तगत पृथ्वी में विद्यमान, पृथ्वी से उपजने वाली और पृथ्वी की विकारभूत सभी वस्तुओं का संरक्षण एवं शोधन आवश्यक है। समस्त मानव प्राणियों का आधार यह पृथ्वी ही है, उसी की गोद में पलबढ़ कर सभी अपना जीवन निर्वाह करते है। हमें जीवन में जो कुछ भी उपलब्ध होता है वह सब पृथ्वी की कृपा से होता है।[13] ऋग्वेद के पृथ्वी सूक्त में मानव एवं पृथ्वी को एक स्नेह सूत्र में बधें होने की व्याख्या की गयी है। औषधी, वनस्पति, और वृक्षों के संरक्षण तथा संवर्धन के लिये वेदो में कहा गया है कि– जल, वायु, तथा औषधियाँ इस भूमंडल में सृष्टिकर्ता ने इस लिए उत्पन्न किये हैं कि इनसे मनुष्य आदि समस्त जीव–जन्तुओं को सुख और शान्ति प्राप्त हो।[14] वन और वृक्षों के महत्व को देखते हुए कहा गया है– वृक्षों के समूह रूप जो वन हैं उनमें वृक्ष वनस्पतियों को चारों ओर लगा–लगा कर बढाओ।[15] ऋग्वेद में तो यहॉ तक कहा गया है कि संसार को पवित्र करने वाले परमात्मा वनस्पति के मधु अर्थात वर्षा की धारा से संयुक्त कर इतना बढाओं कि वह हजारों कलियों के रूप में खिल उठे और उसके चमकीले

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 64-68 , ISSN 2348 – 3318
धमेन्द्र यादव एवं डी0 पी0 सकलानी
International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

सुवर्णमय आभा लिये हरे पत्ते चारों और अपनी शोभा बिखेर डालें।[16] ऋग्वेद के दशवें मण्डल का 'औषधीययुक्क'[17] तथा 'अरण्यानी सूक्त'[18] और 'अर्थववेद' मे अनेक प्रकार के औषधीय तथा वनों के गुणों और उपयोगिता के वर्णन मिलते है। पृथ्वी में ईश्वर द्वारा उत्पादित ये औषधियॉ जीवनदायनी, बलदायनी, रोगनाशक और आयुवर्धक है। इनकी इन विशेषताओं के कारण वेदो में हरे–भरे वृक्षों तथा उसके रक्षको को विशेष आदर भावना की प्ररेणा दी गयी है। हरे भरे वृक्षों के लिए सत्कार भाव हो।[19] औषधियों के रक्षक के लिए नमस्कार है। वेदों में वृक्षों को ना काटने की बात कही गयी है।[20] न जल को और न ही औषधीयों को हानि ना पहुॅचाओं।[21]

जलीय पर्यावरण

मनुष्य आदि प्राणियों सभी प्रकार के वनस्पति पेड़–पौधों तथा घासों के लिए पृथ्वी में विभिन्न जल स्रोतों में प्रयाप्त मात्रा में जल और साथ ही समय–समय पर आकाश से बरसने वाले जल का होना बहुत आवश्यक है। जल के बिना सभी जीव जन्तुओं, प्राणियों का जीवित रहना संभव नहीं है। इसलिए कहा गया है कि जल ही जीवन है। इस जल को बनाए रखने और नष्ट न होने देने तथा उसके शुद्धिकरण का हमेशा ध्यान रखने के सम्बन्ध में वेदो में बहुत कुछ कहा गया है– हे ईश्वर आपने पृथ्वी में, अंतरिक्ष में, द्युलोक में तथा औषधियों में जल धारण किया हुआ है। आपकी कृपा से ये दशों दिशायें मेरे लिए सदा सजल और सरस रहें।[22]

जल के महत्व का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि– इस धरती पर अन्न, वनस्पति तथा जैविक प्रक्रिया तभी संभव हो सकती है जब वर्षा हो, इसलिए भूमि के हरा भरा बने रहने के लिए इंद्रा कि स्तुति कि गयी है। सदा जल से परिपूर्ण नदियां एवं अन्य जल स्रोत इस पृथ्वी को निरन्तर सींचते रहते हैं और मनुष्यादि प्राणियों को पेय जल उपलब्ध कराते रहें।[23] पतित पावनी गंगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों के सम्बन्ध में यह कहा गया है– हे गंगा, यमुना, सरस्वती, पुरुश्णी के साथ शतुद्धि, मेरे इन स्त्रोतों को स्वीकार करो तथा असि की कन्या व् मरुदृधा वितस्ता के साथ मेरी स्तुति को सुनो।[24] पर्वतो और नदियों, भूमि और जल मे घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। वेदो मे जल को मूल तत्त्व मन गया है। ऋग्वेद मे यह कहा गया है कि जब न पृथ्वी थी और न आकाश, उस समय भी जल विद्यमान था।[25] ईश्वर ने सर्वप्रथम जल को जन्म देकर उसको नार की संज्ञा दी और उसमे अपना बीज छोड़ दिया जो नारायण कहलाता है। वस्तुतः जल चेतना का कारण भी है जल मे औषधि और अमृत तत्व विद्यमान रहता है।[26]

जल के सम्बन्ध मे वेदों मे कहा गया है कि दो बातें जानना बहुत महत्वपूर्ण है। पहली यह कि जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहे, जिससे कि हमारे भोजन–पान, स्नान, तथा क्रियादि कार्यो में उसको प्रयोग में ला सकें। दूसरी यह कि जल शुद्ध और साफ हो, अशुद्ध या मलीन नहीं।[27]इसी प्रकार– हे पृथ्वी माता आपके झरने से हमारे इस शरीर के लिए शुद्ध जल मिले जो दुःखदायक कर्म हैं उन्हें अप्रिय एवं अनुचित जानकार हम त्याग दें तथा पवित्र आचरण से मैं अपने को पवित्र करता हूँ। दिव्य गुण वाले जल हमारे लिए कल्याणकारी हों उनका पान करते हुए हमें अभीष्ठ आनंद और शांति प्राप्त हो, जलपान एवं स्नान करते हुए वे हमें तृप्त एवं आरोग्य प्रदान करें।[28] इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि वेदों मे अधिक से अधिक जल स्रोतों को बचाए रखने, उन्हें नष्ट न होने देने तथा उनके शुद्धिकरण कि बात कही गयी है।

वायवीय पर्यावरण

पर्यावरण के सभी अंग–उपांग हमरे लिए महत्वपूर्ण हैं। उनमें से किसी एक के अभाव में भी हमारा जीवन चल नहीं सकता। इसलिए वेदों मे वायु कि शुद्धता पर भी मनुष्य का ध्यान आकृष्ट किया है– हमारे लिए वायु कल्याणकारी होकर प्रवाहित हो, सूर्य कल्याणकारी बनकर तपे, तथा गरजते हुए मेघ कल्याणकारी वर्षा करें।[29] इसी प्रकार– सुन्दर शीतल मंद सुगंध वायु हमें आरोग्य प्रदान करे और जो दुर्गन्धादि दोष हैं उन्हें दूर करे। हे वायु तू सर्व औषधि वाला है और दिव्य गुणों के दूत के समान शरीर के भीतर बहार गति करता है।[30] वायु को औषधि गुणों से युक्त मान गया है वायु के बिना एक पल भी जीवित रहना मुश्किल है।[31] इस कारण वेदों मे वायु को न केवल देवता तुल्य मान है वरन जीवनदाता, मित्र, भाई व पालनकर्ता भी मान है। वायु हमारा पिता, भाई, सखा आदि सब कुछ है वह हमें जीवन के योग्य बनावे।[32]हे वायु देवता तेरे घर मे जो यह अमृत का कोश रखा है उसमें से हमें जीवन के लिए अमृत प्रदान कर।[33] वेदों के अनुसार घरों की असुद्ध वायु को बहार निकलकर उसके स्थान मे शुद्ध वायु का प्रवेश करने का उपाय यज्ञ से बढ़कर दूसरा नहीं है।

निष्कर्ष –

वेदों में यह घोषणा की मनुष्य अपने प्रयत्न से वायु, जल तथा औषधी वनस्पति को इतना शुद्ध रखे कि ये मार्धुय की धारा बहाया करें ओर उनके संसर्ग में रहने वाले मनुष्यादि, समस्त जीव–जन्तु सुख और शान्ति का अनुभव करें। वेदों में वृक्ष को प्राकृतिक सन्तुलन बनाये रखने वाला बताया गया है। ऋक्, यजु, साम एवं अथर्व इन चारो वेदो में पर्यावरण के विभिन्न तत्वों के विषय में चिन्तन, मनन नितान्त तर्क संगत है। वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति का विकास प्रकृति की गोद में हुआ है। वेदों ने पर्यावरण संरक्षण के लिए मनोवैज्ञानिक उपाय अपनाया जिसका प्रत्यक्षतः प्रभाव हमारे जीवन में दृष्टिगत है।

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 64-68 , ISSN 2348 – 3318
धमेन्द्र यादव एवं डी0 पी0 सकलानी
International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

वैदिक मनीषियों ने सर्वदा पर्यावरण प्रदूषणमुक्त धरा की कल्पना की है। समस्त प्राकृतिक शक्तियों की महिमा में मुक्तकंठ से स्तुति की गई जहाँ प्रत्येक प्राणी का अनुभव आनन्ददायी होता है। जैसेः– सम्पूर्ण वायुमंडल मधु की वर्षा कर रहा है द्युलोक सूर्य–चन्द्र, दिन रात सभी अमृतमय हैं। नदियाँ वनस्पतियाँ और औषधियाँ हमारे लिये जीवनदायी है। भूमि को माता के तुल्य संरक्षण करने वाली। इस जीव जगत के लिए पर्यावरण की रक्षा में वायु की स्वच्छता को अनिवार्य माना गया है। बिना प्राण वायु (ऑक्सीजन) के क्षण भर भी जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। ऋग्वेद का सम्पूर्ण नवम् मण्डल अर्थात सोम–सूक्त अरण्यानी सूक्त एवं अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त इत्यादि में पुनः एक ही सत्य से अवगत कराया गया है कि हमारी भूमि हरी–भरी रहे तथा स्वास्थ्यवर्धक औषधियों, वनस्पतियों से सदा परिपूर्ण रहे एवं हमारे लिए सुखदायिनी हो।

इस प्रकार हम देखते है कि पर्यावरण की रक्षा हेतु वायु, जल, ध्वनि, खाद्य पदार्थ इत्यादि को प्रदूशण मुक्त रखने के लिए वेदों में सरल व अनुकरणीय उपाय बताए गए है। वेदों में जीवन की पूर्णतः एवं सुखी स्वस्थ्य जीवन के लिये उपयोगी समस्त प्राकृतिक पदार्थो को जीवन के अभिन्न अंग के रूप में विकसित करते हुए उनकी मानवीय संदर्भो में उपयोगिता प्रदर्शित की गई है। प्राकृतिक पदार्थ हमारें वास्तविक मित्र एवं जीवनदाता है। उनके अस्तित्व के बिना जीवन की कल्पना करना मुश्किल है। अतः वह हमारे लिये हर दृष्टि से उपादेय होने के कारण आदरणीय एवं वंदनीय हैं। प्रकृति एवं भारतीय संस्कृति का अतिद्वितीय सम्बद्ध रहा है। वृक्षों से ही हमारी संस्कृति उपजी, पनपी ओर विकसित हुई है। वन हमारे लिये कभी की जड़ पदार्थ नहीं थे। उन्हें हमेशा सजीव प्राकृतिक तत्वों रूप में सम्मान दिया गया है। वेदों में प्राकृतिक शक्तियों को दैवीय स्वरूपा मानने और धार्मिक भावना के साथ जोड़ने का मुख्य उदेद्श्य था कि हम उनके प्रति अनुराग एवं उनकी रक्षा करें और उनके सहयोग से स्वस्थ्य सुखी ओर सन्तुलित जीवन बिताये।

सन्दर्भ

1. शर्मा, आचार्य मुंशीराम (1998) वैदिक दर्शन : विचार और संस्कृति, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 114–123।
2. मिश्रा नित्यानन्द (1998) पर्यावरण संस्कृति, प्रदूशण एवं संरक्षण, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा, पृष्ठ संख्या– 24–45।
3. यादव, वीरेन्द्र सिंह (2010) भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन के विविध आयाम, ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 110–113।
4. राव, बी0पी0 एव श्रीवास्तव वी0 के0 (2007) पर्यावरण एवं पारिसिथितिकी, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, पृष्ठ संख्या– 4–7।
5. पं0 सुदर्शन देव आचार्य (व्याख्याता), यजुर्वेद, आर्श साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली–1974 भाग–2। ''नमो वुक्षेभ्यः'' (यजुर्वेद 16. 17)
6. वृक्षाणां पतये नमः''(यजुर्वेद 16.18) वही।
7. ''ओशधीनां पतये नमः''(यजुर्वेद 16.19) वही।
8. ''वनानां पतये नमः''(यजुर्वेद 16.20) वही।
9. मिश्रा हृदयनारायन (2006) पारिस्थिकी दर्शन ,शेखर प्रकाशन इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या–50– 58।
10. श्री मन्मोक्षमूलर भट्ट (सम्पादक), ऋग्वेंद, चौखम्भा संस्कृत सिरिज, वाराणसी– 1986 भाग–4। ''द्यौर्वः पिता ..... सु कम्।।''(ऋग्वेंद 1/191/6, पृष्ठ 245)
11. ''ऋतेन ऋतं ..... पयसा पीपाय।।''(ऋग्वेद 4/3/9 पृष्ठ 372) वही।
12. यादव, राजनन्दन (2009) भारतीय दर्शन में भौतिकवादी तत्व, कला प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ संख्या– 46–68।
13. कुमार, शशिप्रभा (2010) भारतीय संस्कृति : विविध आयाम, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 46–48।
14. विश्ववन्धु (आचार्य) अर्थव वेद, वेदशास्त्र संग्रह, प्रथम खण्ड, साहित्य अकादमी, दिल्ली–1966। ''आयो वाता ..... अर्पितानी।''(अर्थव वेद 18/1/17)
15. ''वनस्पति वन आस्थापयध्वम्।। ''(ऋग्वेद 10/101/11) वही।
16. ''वनस्पतिं पवमान .....हिरण्ययम्।।'' (ऋग्वेद 9/5/10) वही।
17. (ऋग्वेद 10–97) वही।
18. (ऋग्वेद 10–146) वही।
19. ''नमों वृक्षेभ्यो हरिकेशेम्य्।''(यर्जुववेद 0/16/17) वही।
20. ''वनानां पतेय नमः''(यर्जुववेद 0/16/18) वही।
21. 'मापो औशधीहिसी' (यजुर्वेद 6/22) वही।
22. ''पयः पृथिव्यां ..... मह्यम्।।'' (ऋग्वेद 0/18/36) वही।
23. ''आतत्त इंद्रायवः .....दुदुक्षन।।''(ऋग्वेद 10/74/4 पृष्ठ 441) वही।

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 64-68 , ISSN 2348 – 3318
धर्मेन्द्र यादव एवं डी0 पी0 सकलानी
International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

24. ''इमं मे ग्ङ्गे .....श्रृवुह्ययासुशोमय।।''(ऋग्वेद 10/75/6 पृष्ठ 442) वही।
25. ''जल न संत् था, न असत्'' (ऋग्वेद 10/129/1) वही।
26. ''अप्स्वंतरमृत्म''(यजुर्वेद 9/6 तथा अथर्ववेद 1/4/4) वही।
27. ''शुद्धा न ..... मोत्युनगमि।।''(अथर्ववेद 12/1/30) वही।
28. ''शं नो देवी ..... स्त्रवत्तु नः।।''(यजुर्वेद 0/36/12) वही।
29. ''शन्नो वातः ..... अभी वर्शतु।।''(यजुर्वेद 0/36/10) वही।
30. ''आ वात ..... दुत ईयसे।।''(ऋग्वेद 10/137/3) वही।
31. शुक्ला, संजय कुमार एवं शुक्ला सुचेता (2010) दार्शनिक चिंतन के विविध आयाम, सत्यम पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 172–185।
32. ''उत वात ..... कृधि।।''(ऋग्वेद 10/186/2 पृष्ठ 525) वही।
33. ''याददो वात .....जीवसे।।''(ऋग्वेद 10/187/3(44) पृष्ठ 525) वही।